महाभागवत पुराण में शिवतत्त्व

महाभागवत पुराण देवी की महिमा को मण्डित करनेवाला एक प्रमुख उपपुराण माना जाता है। बृहद्धर्म पुराण में इसकी गणना 18 महापुराणों में की गयी है। महाभागवत पुराण स्वयं भी अपने आप को या तो पुराण या महापुराण कहता है; पर यह कभी भी अपने को उपपुराण नहीं कहता। महाभागवत एवं बृहद्धर्म पुराणों की तुलना से पता चलता है कि बृहद्धर्म भाषा एवं विषय की दृष्टि से महाभागवत से काफी समानता रखता है। महाभागवत का शाक्तों में उसी प्रकार का स्थान है जिस प्रकार देवीभागवत एवं मार्कण्डेय पुराण का। इस पुराण में कुल 81 अध्याय हैं। इस पुराण के प्रमुख वक्ता भगवान् शिव एवं श्रोता नारदजी हैं।

भगवान् शिव का स्वरूप

यद्यपि यह पुराण महादेवी की महिमा को गौरवान्वित करने के लिये लिखा गया है, तथापि इसमें भगवान् शिव की महिमा की भी पर्याप्त चर्चा है। भगवान् शिव को न केवल शक्ति या देवी से अभिन्न बताया गया है, अपितु उन्हें ब्रह्म भी बताया गया है। वे निर्गुण एवं सगुण दोनों हैं। सगुणरूप में वे ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्ररूप धारण कर क्रमशः जगत् की सृष्टि, पालन तथा संहार करते हैं। भगवान् शिव के निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों की झलक हमें उन लोगों की स्तुतियों तथा कथाओं में प्राप्त होती है जिनका उल्लेख इस पुराण में किया गया है।

दधीचि दक्ष के प्रश्न के उत्तर में शिव की विशेषताओं को बताते हुए उन्हें नित्यानन्दमय, पूर्ण, सर्वेश्वरेश्वर (महाभागवत पु. 5/8), सर्वत्रगामी, भगवान्, सब जगह स्थित (महाभागवत पु. 5/11), त्रिलोकेश आदि (महाभागवत पु. 5/17) कहा है।

नित्यानन्दमयः पूर्णः स हि सर्वेश्वरेश्वरः।।
सर्वत्रगामी भगवान् सर्वस्थश्च सदाशिवः।। (महाभागवत पु. 5/8, 11)

ब्रह्मादि देवता, श्रेष्ठ योगीगण तथा तत्त्वदर्शी लोग भी भगवान् शिव के परमस्वरूप को नहीं जान सकते।

ब्रह्माद्यैस्त्रिदशश्रेष्ठैर्योगिभिस्तत्त्वदर्शिभिः।
यस्य तत्परमं रूपं लक्षितुं नैव शक्यते।। (महाभागवत पु. 5/10)

नन्दी भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें लोकों के आदि, परमपुरुष, संपूर्ण जगत् के विधाता, रक्षक एवं प्रलयकर्त्ता, अद्वैत ब्रह्म, सुरश्रेष्ठ, गौरीपति, वर देनेवाले, अचिन्त्य स्वरूपवाले, चन्द्रमा को धारण करनेवाले, सर्पों को आभूषण के रूप में धारण करनेवाले तथा ब्रह्मादि द्वारा अर्चित आदि विशेषताओं से युक्त बताते हैं।

त्वमादिर्लोकानां परमपुरुषः सर्वजगतां

विधाता संपाता शिव प्रलयकर्ता त्वमपि च।

.....

त्वमेकं ब्रह्म त्वं सुरवर भवानीश वरद।।

अचिन्त्यं ते रूपं.....

नमामि ब्रह्माद्यैर्नमितपदपङ्केरूहयुगम्।। (महाभागवत पु. 6/18, 19)

शिवजी को परम योगी तथा मान एवं अपमान में सम रहनेवाला बताया गया है।

शिवस्तु परमो योगी समः पूजापमानयोः। (महाभागवत पु. 7/99)

भगवान् शिव को सर्वदेवेश(महाभागवत पु. 9/3 आदि), परमेश्वर(वही 9/7 आदि), यज्ञेश्वर(वही 9/8 आदि), देवदेव तथा विभु(वही 9/23 आदि), सभी लोकों के कारण तथा परमात्मा(वही 9/67 आदि), आशुतोष(वही 10/89, 96 आदि) और अव्यय(वही 10/90 आदि) कहा गया है।

दक्षप्रजापति ने भगवान् शिव के ऐश्वर्य से परिचित होने के बाद उनकी स्तुति की। अपनी स्तुति में वे भगवान् शिव के प्रति कहते हैं कि उन्हें न तो विष्णु, न ब्रह्मा, न योगी ही जानते हैं, तब वह कैसे आपके दुर्गम्यरूप को जान सकता है? आप शुद्ध, परम, परात्परतर, ब्रह्मादि द्वारा अर्चित, परमेश्वर, पशुपति, विश्वरूप, विश्वेश्वर तथा ब्रह्मा, विष्णु आदि देवों द्वारा पूजित हैं। (महाभागवत पु. 10/91-95)

न त्वां जानाति विष्णुर्नच कमलरुहो योगविद्योगमुख्य

एवं दुर्गम्यरूपं कथमतिकुमतिर्ज्ञातुमेवास्य योग्यः।

त्वं शुद्धः परमः परात्परतरो ब्रह्मादिदेवार्चितः

.....

ते सर्वे तव मूर्तयः पशुपते त्वं विश्वरूपो यतः। (महाभागवत पु. 10/91-93)

दक्ष की स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान् शिव ने जब पूजादि ग्रहण कर लिया तब ब्रह्माजी भगवान् शिव के प्रति कहते हैं कि आप भक्तों पर अनुकम्पा करनेवाले सदाशिव हैं। जो अधम पुरुष आपके बिना अन्य देवों का भजन करते हैं, उनका यज्ञ (फल) नष्ट हो जायगा तथा वे महापातकी कहलायेंगे।

ततो ब्रह्मा महादेवं पुनः प्रोवाच भक्तितः।

भक्तानुकम्पी भगवान् त्वमेव हि सदाशिवः।।

ये त्वां विना सुराश्चान्यान्यजन्ते च नराधमाः।

हतयज्ञा भविष्यन्ति महापातकिनश्च ते।। (महाभागवत पु. 10/99, 102)

शिव एवं शक्ति की अभिन्नता को ध्यान में रखकर ही कहा गया है कि भगवान् शिव

परमब्रह्म हैं।

शिवः प्रधानः पुरुषः शक्तिश्च परमा शिवा।
शिवशक्त्यात्मकं ब्रह्म योगिनस्तत्त्वदर्शिनः।। (महाभागवत पु. 18/14)

नारदजी ने भगवान् शिव को एक स्थल पर देवदेव, जगन्नाथ, कृपामय तथा जगत्प्रभु कहा है।

देवदेव जगन्नाथ कृपामय जगत्प्रभो।
..... (महाभागवत पु. 59/1)

भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न हो जब भगवान् शिव ने दर्शन दिया तब उस समय वे पाँच मुखवाले, चाँदी के समान गौर वर्णवाले, त्रिशूल एवं व्याघ्रचर्म को धारण किये हुए, मस्तक पर जटा मण्डित, सभी अंगों में विभूति लगाये, नीलकण्ठ, प्रसन्नमुख, नागेन्द्रविभूषित, मस्तक पर सुन्दर अर्द्धचन्द्र धारण किये हुए थे। (महाभागवत पु. 66/53-54)

भगवान् शिव को उपरोक्त रूप में देखकर भगीरथ ने 1008 नामों से उनकी स्तुति की। वे अपने सहस्त्रनाम स्तुति में भगवान् शिव को अन्यान्य विशेषणों तथा संज्ञाओं के साथ-साथ निम्नलिखित से भी युक्त माना है।

परात्पर, अच्युत, अनघ(पापरहित), महासत्त्व, परमेश्वर, महाज्ञानमय, विश्वेश, विश्वाश्रय, जगत्पति, सर्वज्ञाता, अज्ञान विवर्जित, सुरोत्तम, सुरवंद्य, सुरपूज्य, सुरध्येय, सुरेश्वर, शुद्ध, शुद्धबोध, शुद्धात्मा, शिव(कल्याणमय), सर्वशान्ति विधायक, सर्वार्थद(सभी प्रयोजनों को पूरा करनेवाले), शिवद(कल्याणकर्त्ता), गंगाधर, सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि को नेत्ररूप में धारण करनेवाले, शितिकण्ठ, वरद, भयत्राता, भूतात्मा, कामनाशन(कामनाओं का नाश करनेवाले), काशीविहारी, गुरु, मृत्युञ्जय, हरि, लोकों के पाप हरनेवाले, सगुण, निर्गुण, पुण्यद, परोपकारी, पापिष्ठनाशक, पापहारक, पशुपति, पाशबद्धविमोचक, परित्राता, अखिलेश्वर, पुण्डरीकाक्ष सेवित, प्रणतार्तिहर, सभी के प्रपितामह, पुत्र एवं पुत्री प्रदान करनेवाले तथा उनके रक्षक, पुत्रवत् परिपालक, परित्राता, सुरासुर निषेवित, परम वैष्णव, सर्वधर्मविधानज्ञ, सभी रोगों का प्रशमन करनेवाले, सर्वधर्मप्रदर्शक, सकलज्ञ(सब कुछ जाननेवाले), शोक का प्रशमन करनेवाले, समदर्शी, सत्प्रिय, भवबन्धु, भवबन्ध विमोचक, भोगमोक्षफलप्रद, दयावान, नानासुखप्रद, नानामूर्तिधारी, नित्यविज्ञानसंयुक्त, लोकसम्पूज्य, नारायण, नवीनबिल्वपत्रों से तुष्ट रहनेवाले, विद्यापति, चतुर्वेदमय, चतुराननपूजित, मंगल देनेवाले, असाध्यसाधक, शोकापनोदक(शोक को दूर करनेवाले), श्रीसुसेव्य, श्रीपति, श्रीस्वरूप, सर्वग(सर्वत्र गति करनेवाले), केवल आत्मस्वरूप, केवल ज्ञानस्वरूप, बृहदानन्ददायक, सर्वविपत्तिपरिनाशक, विश्वतृप्तिकर, भक्तानामीप्सितकर(भक्तों की इच्छाओं को पूरा करनेवाले), वांछिताभीष्टफलद(वांछित अभीष्ट फल को देनेवाले), जगन्नाथ तथा जगद्योनि इत्यादि। (महाभागवत पु. 67/1-125)

भगीरथ के सहस्त्रनाम के कुछ श्लोक देखें-

ॐ नमस्ते पार्वतीनाथ देवदेव परात्पर।
अच्युतानघ पञ्चास्य भीमास्य रुचिरानन।।
अजितामितदुर्धर्ष विश्वेश परमेश्वर।
विश्वात्मन्विश्वभूतेश विश्वाश्रय जगत्पते।।
शर्व सर्वविदज्ञानविवर्जित सुरोत्तम।
सुरवन्द्य सुरस्तुत्य सुरराज सुरोत्तम।।
त्वं शुद्धः शुद्धबोधश्च शुद्धात्मा जगतां पतिः।
.....सगुणो निर्गुणो गुणी।।
परोपकारी पापिष्ठनाशकः पापहारकः।
सुरज्येष्ठः सुरश्रेष्ठः सुरासुरनिषेवितः।।
भवबन्धुर्भवहरो भवबन्धनमोचकः।
भुवनेशो भूतपूज्यो भोगमोक्षफलप्रदः।।
नानासुखप्रदो नानामूर्तिधारी च नर्तकः।
नित्यविज्ञानसंयुक्तो नित्यरूपोऽनिलोऽनलः।।
चतुर्वेदमयश्चक्षुश्चतुराननपूजितः।
असाध्यसाधकः शूरसेव्यः शोकापनोदनः।।
केवलात्मस्वरूपश्च केवलज्ञानरूपकः।

(महाभागवत पु. 67/1, 3, 5, 7, 35, 42, 60, 75-76, 79, 90, 97, 104)

अर्थात्- ॐकारस्वरूप पार्वतीनाथ, देवों के देव, परात्पर, अच्युत, अनघ, पंचवदन, अजित, अमित, दुर्धर्ष, विश्वेश, परमेश्वर, विश्वात्मन्, विश्वभूतेश, विश्वाश्रय, जगत्पति, सर्वज्ञ, अज्ञानरहित, सुरोत्तम, देवताओं द्वारा वन्दित तथा स्तुत्य तथा देवों के राजा आपको नमस्कार है। आप शुद्ध, निर्मलबोधस्वरूप, शुद्धात्मा, जगत् के पति, सगुण, निर्गुण, गुणवान्, परोपकारी, पापियों का नाश करनेवाले, पाप का हरण करनेवाले, देवताओं में ज्येष्ठ एवं श्रेष्ठ, सुरासुर द्वारा सेवित, जगत् के बन्धु, भवहारी, भवबन्धनमोचक, भुवनों के स्वामी, भूतों द्वारा पूज्य, भोगमोक्षफलदाता, नाना सुखों के दाता, नानामूर्तिधारी, नर्तक, नित्य विज्ञान से संयुक्त, अग्नि एवं वायुरूपवाले, चतुर्वेदमय, ब्रह्मा द्वारा पूजित, असाध्य के भी साधक, वीरों द्वारा सेव्य, शोक को दूर करनेवाले, केवल आत्मस्वरूप तथा केवल ज्ञानरूपवाले हैं।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि भगवान् शिव ही(शक्ति से युक्तरूप में) ब्रह्म हैं। जब शक्ति निष्क्रिय रूप में होती है तो शिव निर्गुण होते हैं। जब उनकी इच्छा से शक्ति क्रियाशील

हो जाती है तो ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्रादि देवों की उत्पत्ति होती है। तदनन्तर ये तीनों प्रमुख देव सृष्टिव्यापार को शिवेच्छा के अनुरूप चलाते हैं। निर्गुण शिव बह्मा, विष्णु, योगी तथा विद्वानों- सभी के द्वारा अज्ञेय हैं। यही कारण है कि दक्ष भगवान् शिव के ऐश्वर्य को नहीं पहचान सका और उन्हें एकादश रुद्रों में से एक समझकर उनकी निन्दा की। दक्ष की शिवस्तुति (10/91-93) से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है। सगुण शिव के अनेकों विशेषण एवं संज्ञायें इस पुराण में प्रयुक्त हैं जिनमें से कुछ का उल्लेख ऊपर हो चुका है। सगुण-साकार शिव कैलासवासी हैं। वे सदाशिव के पूर्णावतार हैं जो लोक-कल्याण के लिये वहाँ रहते हैं। जबकि सदाशिव शिवलोक में रहते हैं जहाँ पर ब्रह्मा-विष्णु आदि की भी पहुँच नहीं है।

अपूर्वः शिवलोकः स विष्णुब्रह्मादिदुर्लभः।। (महाभागवत पु. 5/12)

शिवोपासना

भगवान् शिव के स्वरूप की ऐसी अनेक विशेषतायें हैं जो शिवभक्ति के आकर्षण को बढ़ाती हैं। उदाहरण के लिये उन्हें आशुतोष अथवा शीघ्र प्रसन्न होनेवाला(महाभागवत पु. 6/89 आदि), शरणागतवत्सल(वही 6/15 आदि), दीनों पर दया करनेवाला(वही 6/20, 67/77), वर देनेवाला (वही 6/18, 67/9, 17 इत्यादि), पूजा से स्वर्ग प्राप्त करानेवाला(वही 6/20 आदि), दयानिधि (वही 10/96, 67/77 आदि), भक्तानुकम्पी(वही 10/99, 6/16 आदि), सुरासुर तथा लोक द्वारा पूज्य(वही 67/5, 60, 80 आदि), कल्याणरूप(वही 67/8), सर्वार्थद अर्थात् सभी प्रयोजनों को पूरा करनेवाला(वही 67/9), कल्याणकर्त्ता(वही 67/9, 95 आदि), भयत्राता(वही 67/19 आदि), कामनाओं का नाश करनेवाला(वही 67/20 आदि), पाप हरनेवाला(वही 67/35, 40-42 आदि), परोपकारी(वही 67/42 आदि), पाश में बँधे हुए को छुड़ानेवाला(वही 67/44-45 आदि), परित्राता(वही 67/47, 54 आदि), प्रणतजनों के दुःख को हरनेवाला(वही 67/51, 130 आदि), पुत्र-पुत्री देनेवाला तथा उनका रक्षक(वही 67/53), पुत्रवत् परिपालक(वही 67/54), सर्वरोगापहारक(वही 67/62), सर्वधर्म प्रदर्शक(वही 67/63), शोकहन्ता(वही 67/65, 97, 100 आदि), समदर्शी(वही 67/71), सहिष्णु(वही 67/72), भवहर(वही 67/75), भोगमोक्ष फलप्रद(वही 67/76 आदि), नाना प्रकार का सुख देनेवाला(वही 67/79), विद्या के स्वामी(वही 67/86 आदि), ब्रह्मा द्वारा पूजित(वही 67/90 आदि), असाध्य-साधक(वही 67/97, 100 आदि), लक्ष्मीजी द्वारा सेव्य(वही 67/98 आदि), सर्वविपत्तिनाशक(वही 67/110 आदि), विश्व को तृप्त करनेवाला(वही 67/112-113) तथा मनोवांछित फल देनेवाला (वही 67/115-116 आदि) आदि-आदि कहा जाता है।

दधीचि दक्ष को समझाते हुए कहते हैं कि भगवान् शिव के अभाव में कोई भी यज्ञकर्म पूरा नहीं होता। अर्थात् वह फलप्रद नहीं होता।

विना तेन(शिवेन) कृतो यज्ञः कदाचिन्न फलप्रदः।
यथाऽर्थवर्जितं वाक्यं श्रुतिहीनो यथा द्विजः।।
गंङ्गाहीनो यथा देशस्तथा यज्ञः शिवं विना।
पतिहीना यथा नारी पुत्रहीनो यथा गृही।।
यथा काङ्क्षा निर्धनानां तथा यज्ञः शिवं विना।
दर्भहीना यथा सन्ध्या तिलहीनं च तर्पणम्।।
यथा होमो हविर्हीनस्तथा हीनश्च शम्भुना। (महाभाग. पु. 7/60-63)

भावार्थ यह है कि बिना शिव के किया गया यज्ञ उसी प्रकार व्यर्थ है जिस प्रकार अर्थरहित वाक्य, वेदरहित ब्राह्मण, गंगा से रहित देश, पतिरहित नारी, पुत्रहीन गृहस्थ, निर्धन से धन की आकांक्षा, कुशरहित संध्या, तिलरहित तर्पण तथा हवि से रहित यज्ञ।

ब्रह्माजी भगवान् शिव के प्रति कहते हैं कि जो अधम मनुष्य आपके बिना अन्यान्य देवताओं का भजन करेगा उसका यज्ञ निष्फल होगा तथा वह महापातक का भागी होगा। अर्थात् प्रत्येक यज्ञ में शिव की पूजा आवश्यक है अन्यथा यज्ञकर्ता महापातकी होगा।(महाभागवत पु. 10/102)

इस पुराण में एक स्थल पर भगवान् शिव नारद मुनि से कहते हैं कि घोर कलियुग में पापी मनुष्यों के लिये महादेवजी का पूजन मुक्तिप्रद है।

एव घोरकलौ चापि नराणां पापचेतसाम्।
मुक्तिप्रदं महादेवपूजनं मुनिसत्तम।। (महाभागवत पु. 81/9)

आगे कहा गया है कि कलियुग में शिवपूजा के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है क्योंकि इससे स्वल्पसाधन से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। अर्थात् शिवजी की उपासना से कलियुग में व्यक्ति आसानी से सिद्धि प्राप्त कर लेता है। कलियुग में शंभु की अराधना के समान कोई भी कर्म नहीं है। चाहे कोई शाक्त हो या वैष्णव या शैव, उसे सबसे पहले शंकर की पूजा करनी चाहिये। इसके पश्चात् अपने इष्टदेव की भक्तिभाव से पूजा करनी चाहिये।

उपायो विद्यते नान्यः सत्यं सत्यं कलौ युगे।
शम्भोराराधनात्स्वल्पसाधनान्मुनिसत्तम।।
शम्भोराराधनसमं नास्ति कर्म कलौ युगे।
शाक्तो वा वैष्णवः शैवः पूर्वं सम्पूज्य शङ्करम्।।
पश्चात्प्रपूजयेत्स्वेष्टदेवतां भक्तिभावतः। (महाभागवत पु. 81/11, 13-14)

जो महादेव सभी लोकों के ईश्वरों के भी ईश्वर हैं, उनके ध्यान से व्यक्ति उनकी समानता को प्राप्त कर लेता है तथा उसका पुनर्जन्म नहीं होता। जो लोग सच्ची भक्ति से शिवजी, जो सर्वदेवात्मक हैं, की पूजा करता है वह सभी पापों से छूटकर शिवलोक को प्राप्त करता है।

यो ध्यायति महादेवं सर्वलोकेश्वरेश्वरम्।
स तेन साम्यमायाति न पुनर्जन्मभाग्भवेत्।।
पूजयेद्यस्तु सद्भक्त्या सर्वदेवात्मकं शिवम्।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोकमवाप्नुयात्।। (महाभागवत पु. 81/16-17)

भगवान् शिव आगे कहते हैं कि हे नारद! जो लोग भक्तिपूर्वक अथवा बिना भक्ति के भी शिव की पूजा करते हैं वे लोग यम-यातना से बच जाते हैं। इसमें जरा भी संदेह नहीं है। जिस देश या क्षेत्र में शिव-पूजा एवं शिव-भक्तिपरायण लोग बसते हैं वह देश या क्षेत्र बिना गंगा के भी पवित्र होता है।

शिवं यः पूजयेद्भक्त्याऽप्यभक्त्या वापि नारद।
स नैव यमदण्डयः स्यात्सत्यं सत्यं न संशयः।।
यत्र देशे वसेच्छम्भुपूजाभक्तिपरायणः।
सोऽपि पुण्यतमो देशो गङ्गाहीनोऽपि चेन्मुने।। (महाभागवत पु. 81/22, 26)

भगवान् शिव सभी प्रकार की कामनाओं, लौकिक अथवा पारलौकिक, को पूरा करने वाले हैं। उनकी उपासना से नन्दी ने गणेश्वर का पद (महाभागवत पु. अ0 6), भगीरथ ने गंगा को (महाभागवत पु. अ0 66-67) तथा दक्ष ने अपने यज्ञ का फल (महाभागवत पु. अ0 10) प्राप्त किया था। शिव की उपासना ब्रह्माजी (महाभागवत पु. 67/90), लक्ष्मीजी (महाभागवत पु. 67/98), विष्णुजी (महाभागवत पु. 10/50) तथा सुरासुर आदि (महाभागवत पु. 67/5, 60, 80 आदि) द्वारा की जाती रही है। तथा उनकी उपासना से उन लोगों ने मनोवाछिंत फल भी प्राप्त किया।

(1) लिंगपूजा तथा शिवनाम महिमा

भगवान् शिव की सगुण पूजा मूलतः लिंगूपजा ही मानी जाती है। लिंगपूजा के माहात्म्य की चर्चा करते हुए कहा गया है कि मनुष्य लिंगार्चन से आरोग्यता एवं प्रजा की पुष्टि को प्राप्त करता है। जो लोग महेश के निकट भक्तिपूर्वक नृत्य करते हैं उन्हें शम्भुलोक प्राप्त होता है जहाँ वे चिरकाल तक आनंद का उपभोग करते हैं। जो लोग शिव के समक्ष गीत एवं वाद्य का आयोजन करते हैं वे शिव के अन्तःपुर में निवास कर प्रमथेश्वर का पद प्राप्त कर लेते हैं।

आरोग्यमतुलं सौख्यं प्रजापुष्टिविवर्धनम्।
शिवलिङ्गार्चनं कृत्वा प्राप्नुयान्मानवोत्तमः।।
यो नृत्यति महेशस्य सन्निधौ भक्तितत्परः।
स प्राप्य शाम्भवं लोकं मोदते सुचिरं मुने।।
गीतं वाद्यं च यः कुर्यान्मनुजः शिवसन्निधौ।
स शम्भोरन्तिकस्थायी भवेत्तत्प्रमथेश्वरः।। (महाभागवत पु. 81/23-25)

शिव की पूजा या तो स्थापित लिंग में या पार्थिवलिंग में की जाती है। पार्थिवलिंग की पूजा के फल को बताते हुए इस पुराण में कहा गया है कि जो लोग प्रयत्नपूर्वक शिव-शक्तियुक्त (अर्थात् अर्घा सहित) श्रेष्ठ पार्थिवलिंग का निर्माण कर पूजा करते हैं उन्हें कलियुग बाधा नहीं पहुँचाता। मिट्टी की मूर्ति (लिंग) की बिल्वदलों से पूजा कर मुख को बजाने से भगवान् शिव पूजक को सायुज्यता प्रदान करते हैं।

निर्माय पार्थिवं लिङ्गं शिवशक्त्यात्मकं परम्।
पूजयेत्प्रयतो भूत्वा नहि तं बाधते कलिः।।
मूर्तिर्मृदा बिल्वदलेन पूजा अयत्नसाध्यं वदनेन वाद्यम्।
फलं च सायुज्यपदप्रदानं निःस्वस्य विश्वेश्वर एव देवः।।

(महाभागवत पु. 81/10, 12)

जैसा ऊपर बताया जा चुका है कि (शाक्त वा वैष्णव) सभी प्रकार के उपासकों के लिये पहले शिव की उपासना आवश्यक है। इसी सन्दर्भ में भगवान् शिव नारदजी से कह रहे हैं कि किसी भी प्रकार की पूजा करने से पहले बिल्वपत्रों से लिंग की पूजा करनी चाहिये अन्यथा शिवपूजा के अभाव में सभी प्रकार की पूजा शूद्रवत (अर्थात् महत्त्वहीन) होती है। जो लोग दर्प या मोह के कारण ऐसा नहीं करते उनका अधःपतन हो जाता है, वे पापात्मा हैं तथा उनकी अर्चना विफल हो जाती है।

आदौ लिङ्गं प्रपूज्येत बिल्वपत्रैश्च नारद।
अन्यथा शूद्रवत्सर्वं शिवपूजां विना कृतम्।।
व्यतिक्रमं तु यो दर्पान्मोहाद्वापि समाचरेत्।
सोऽधः पतति पापात्मा तस्यार्चा विफला भवेत्।। (महाभागवत पु. 81/14-15)

बिल्व-वृक्ष की जड़ के पास भक्तिपूर्वक जो महादेव की पूजा करता है उसे निश्चित रूप से हजारों अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। जो लोग गंगा के किनारे अथवा गंगाजल एवं बिल्वपत्रों से महादेव की पूजा करते हैं वे सैकड़ों पाप किये रहने पर भी कैवल्य को प्राप्त करते हैं। काशी या भारत के किसी भी पुण्यदायक स्थल (तीर्थ) पर भगवान् शिव की पूजा करनेवाले का पुनर्जन्म नहीं होता।

बिल्वमूले महादेवं यः पूजयति भक्तितः।
सोऽश्वमेधसहस्राणां फलं प्राप्नोति निश्चितम्।।
गंङ्गायां यो महादेवं बिल्वपत्रैः प्रपूजयेत्।
स कैवल्यमवाप्नोति कृतपापशतोऽपि चेत्।।
काश्यां यः पूजयेच्छम्भुं हेलयापि नरोत्तमः।
तस्यान्ते मुक्तिदाता स महेशः स्वयमेव हि।।

पुण्ये भारतखण्डे तु स्थलं यत्पुण्यदायकम्।
तत्र सम्पूज्य विश्वेशं न पुनर्जन्मभाग्भवेत्।। (महाभागवत पु. 81/27-30)

भगवान् शिव नारदजी से कहते हैं कि शिवपूजा के समान कोई भी कर्म नहीं है क्योंकि यह महापातकों से छुड़ानेवाला तथा सभी विपदाओं का निवारण करनेवाला है। शास्त्रों में असंख्य कर्म बताये गये हैं जो पाप को हरनेवाले तथा पुण्य प्रदान करनेवाले हैं। परन्तु उन सबमें शिव की पूजा तथा शिव एवं दुर्गा के नाम का कीर्तन श्रेष्ठतम हैं। भगवान् शिव के नाम का स्मरण कर किया जानेवाला कोई भी वेदशास्त्रादि द्वारा विहित कर्म अक्षय फल देनेवाला होता है।

एतस्मिन्नास्ति कर्मान्यच्छिवपूजासमं मुने।
महापापहरं पुण्यं सर्वापद्विनिवारकम्।।
असङ्ख्यानि च कर्माणि पुण्यदानि महामुने।
उक्तान्यनेकशास्त्रेषु न्ऋणां पापहराणि वै।।
तेषु श्रेष्ठतमं ज्ञेयं शिवसम्पूजनं परम्।
कीर्तनं शिवनाम्नश्च दुर्गानाम्नो विशेषतः।।
संस्मृत्य शम्भोर्नामानि यत्किञ्चित्कुरूते नरः।
कर्म वेदादिशास्त्रोक्तं तदक्षय्यतमं भवेत्।। (महाभागवत पु. 81/32-34, 36)

शिवनाम की महिमा को बताते हुए आगे कहा गया है कि जो भाग्यशाली पुरुष शिव, विश्वनाथ, विश्वेश, हर इत्यादि नामों का उच्चारण करता है उससे गौरीपति प्रसन्न होते हैं तथा उसके संरक्षणार्थ प्रमथगणों के साथ शूल ग्रहण कर वे स्वयं वेग से दौड़ पड़ते हैं। सैकड़ों पापों का करनेवाला भी यदि शिवनाम का स्मरण करता हुआ मर जाता है तो वह शिव के समान हो जाता है। जहाँ कहीं भी शिवजी का स्मरण किया जाता है वहाँ सभी तीर्थों का आगमन हो जाता है।

शिवेति विश्वनाथेति विश्वेशेति हरेति च।
गौरीपते प्रसीदेति यो नरो भाषते सकृत्।।
तस्य संरक्षणार्थाय पृष्ठतः प्रमथैः सह।
शूलमादाय वेगेन स्वयं धावति शूलभृत्।।
शिवनाम स्मरन्मर्त्यस्त्यक्त्वा देहं महामते।
साक्षान्महेशतां याति कृतपापशतोऽपि चेत्।।
यत्र कुत्र च संस्थाय संस्मरेत्परमेश्वरम्।
तत्रैव सर्वतीर्थानि निवसन्ति महामते।। (महाभागवत पु. 81/37-40)

एक स्थल पर नन्दी भगवान् शिव की स्तुति में कहते हैं कि पृथ्वी पर जो लोग आपकी नित्य पूजा कर आपके नामों का कीर्तन करते हैं या भक्तिपूर्वक या अभक्तिपूर्वक सतत आपके मन्त्रों का

जप करते हैं, वे आपके पद को प्राप्त कर सदैव स्वर्ग में रमण करते हैं।

त्वां नित्यं परिपूजयन्ति भुवि ये गायन्ति नामानि ते
मन्त्रं सम्प्रति संजपन्ति सततं भक्त्याप्यभक्त्याथ वा।
तेऽपि त्वत्पदवीमुपेत्य सततं स्वर्गे रमन्ते प्रभो।
.....।। (महाभागवत पु. 6/20)

संक्षेप में कहा जा सकता है कि भगवान् शिव के नाम का कीर्तन या जप या गायन–चाहे भाव–पूर्वक या कुभाव–पूर्वक किसी भी प्रकार से किया जाय उससे व्यक्ति स्वर्ग की प्राप्ति के साथ–साथ शिव की सारूप्यता को भी प्राप्त कर लेता है तथा यथासमय कैवल्य को भी प्राप्त कर लेता है।

(2) रुद्राक्ष का महत्त्व

रुद्राक्ष की महिमा का गान अनेक शास्त्रों में किया गया है। इस पुराण में भी एक पूरा अध्याय रुद्राक्ष की महिमा पर लिखा गया है। रुद्राक्ष के धारण से सैकड़ों जन्मों के अर्जित पापों का विनाश हो जाता है(महाभागवत पु. 80/2)। दर्प या अज्ञानता से गुरु, देवता, महात्मा अथवा ब्राह्मण आदि को नमस्कार न करने से उत्पन्न करोड़ों जन्म के संचित पाप रुद्राक्ष को सिर पर धारण करने से नष्ट हो जाते हैं।(महाभागवत पु. 80/3–4)

यत्पापं सञ्चितं पूर्वं जन्मकोटिषु नारद।
तत्पापं नाशमायाति शिरसाप्यभिधारणात्।। (महाभागवत पु. 80/4)

इसी प्रकार असत्यभाषण, लोभ, उच्छिष्टभक्षण, तथा सुरापान से उत्पन्न करोड़ों जन्म के संचित पाप रुद्राक्ष को कण्ठ में धारण करने से नष्ट हो जाते हैं (वही 80/5)। दूसरों के द्रव्य का अपहरण करने, दूसरों को पीड़ा देने एवं सताने, अस्पृश्य के स्पर्श हो जाने तथा परिग्रह से उत्पन्न करोड़ों जन्म के संचित पाप रुद्राक्ष को कर में धारण करने से नष्ट हो जाते हैं(वही 80/6–7)। असत्प्रसंग के सुनने से होनेवाले संचित पाप रुद्राक्ष को कान में धारण करने से नष्ट हो जाते हैं(वही 80/8)।

परस्त्रीगमन, ब्रह्महत्या तथा वेदविहित कर्मों के त्याग से उत्पन्न अनेक जन्मों के संचित पाप शरीर में कहीं पर भी रुद्राक्ष के धारण से नष्ट हो जाते हैं।

परस्त्रीगमनाद् ब्रह्मवधाद्वेदस्य कर्मणः।
सन्त्यागात्सञ्चितं पापं यत्पूर्वं बहुजन्मसु।
तत्पापं नाशमायाति यत्र कुत्रापि धारणात्।। (महाभागवत पु. 80/9)

संक्षेप में कहा जाय तो रुद्राक्ष के किसी भी अंग में धारण करने से सभी प्रकार के पापों से मुक्ति मिल जाती है।

रुद्राक्ष के आभूषण से युक्त व्यक्ति को देखकर प्रणाम करने से भी सैकड़ों पापों के कर्त्ता का पाप दूर हो जाता है। रुद्राक्षधारी इस पृथ्वी पर रुद्र की भाँति निर्भयपूर्वक विचरता हुआ देवताओं की तरह पूज्य होता है।(महाभागवत पु. 80/10-11)

एक रुद्राक्ष को भी धारणकर शिव, देवी अथवा विष्णु की उपासना करनेवाला शिव की सायुज्यता को प्राप्त कर लेता है। भगवान् शिव नारदजी से कहते हैं कि मोहवश बिना रुद्राक्ष धारण किये अगर कोई व्यक्ति दैव या पितृकर्म करता है तो उसका कोई फल नहीं होता तथा वह कर्म व्यर्थ हो जाता है।

विधृत्य चैकं रुद्राक्षं शम्भुं वा परमेश्वरीम्।
विष्णु वा योऽर्चयेत्सोऽपि शिवसायुज्यमाप्नुयात्।।
अविधृत्य नरो यस्तु रुद्राक्षं मुनिसत्तम।
कुरुते पैतृकं कर्म दैवं वापि विमोहितः।
न तस्य फलमाप्नोति वृथा तत्कर्म च स्मृतम्।। (महाभागवत पु. 80/12-13)

भगवान् शिव या दुर्गा के मन्त्रों का जप रुद्राक्ष की माला से करने पर शिव की कृपा से व्यक्ति को स्वर्ग की प्राप्ति होती है। काशी या जिस क्षेत्र में गंगा स्थित है या किसी अन्य तीर्थ में रुद्राक्ष से रहित होकर कभी भी कर्म नहीं करना चाहिये।

रुद्राक्षमालया मन्त्रं यो जपेच्छिवदुर्गयोः।
स प्रयाति नरः स्वर्गं महादेवप्रसादतः।।
काश्यां वा जाह्नवीक्षेत्रे तीर्थेऽन्यस्मिंश्च वा नरः।
रुद्राक्षरहितः कर्म नैव कुर्यात्कदाचन।। (महाभागवत पु. 80/14-15)

दुर्लभ एकमुखी रुद्राक्ष की महिमा बताते हुए कहा गया है कि जिस घर में यह होता है वहाँ स्थिररूप से लक्ष्मी का निवास होता है। उसे कण्ठ या भुजा में धारण करनेवाले के पास दुर्भाग्य या अपमृत्यु नहीं आते। उससे भगवान् शिव प्रसन्न रहते हैं। वह जो कुछ धर्म-कर्म करता है उसका महान् फल होता है।(महाभागवत पु. 80/16-18)

अन्त में कहा गया है कि रुद्राक्षधारी व्यक्ति जहाँ-कहीं भी शरीर छोड़ता है वह अवश्य ही स्वर्ग को जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं।

रुद्राक्षधारी सन्त्यज्य देहं वै यत्र कुत्रचित्।
अवश्यं स्वर्गमाप्नोति तत्र नास्त्येव संशयः।। (महाभागवत पु. 80/19)

(3) शैव स्तोत्र एवं तीर्थ

शिव की उपासना में स्तोत्रों का विशेष महत्व है। इस पुराण में भी शिवसंबंधी कुछ महत्त्वपूर्ण

स्तोत्र हैं। इनमें से पहला स्तोत्र नन्दीकृत है जिसका उल्लेख इस पुराण के अध्याय 6 (श्लोक 18 – 20) में है। इस स्तोत्र की महिमा के बारे में भगवान् शिव कहते हैं कि जो कोई भी भक्तिपूर्वक इसके द्वारा स्तुति करेगा उसका तीनों लोकों में कुछ भी अशुभ नहीं हो सकता। चिरकालतक मर्त्यलोक में रहने के बाद अन्त में वह मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। (महाभागवत पु. 6/24 – 25)

दूसरा प्रमुख स्तोत्र भगीरथ द्वारा किया गया सहस्त्रनाम स्तोत्र है। यह स्तोत्र लिंग पुराण (पूर्वार्द्ध/65/54 – 168) तथा (98/27 – 159), महाभारत (अनुशासनपर्व 17/31 – 153 तथा शान्तिपर्व/284/69 – 180), ब्रह्म पुराण (40/2 – 100), शिव पुराण (कोटिरुद्रसंहिता/35/2 – 132), वायु पुराण (1/30/180 – 284), सूर्य पुराण (41/12 – 140) तथा वामन पुराण (सरो. माहात्म्य 26/62 – 162) के सहस्त्रनाम स्तोत्रों से काफी भिन्न है। यह स्तोत्र इस पुराण के अध्याय 67 (श्लोक 1 – 125) में पाया जाता है। महादेवजी कहते हैं कि भगीरथकृत सहस्त्रनाम स्तोत्र का जो भक्तिपूर्वक पाठ करता है, वह कैवल्य को प्राप्त होता है।

राजा कृतमिदं स्तोत्रं सहस्त्रनामसंज्ञकम्।
यः पठेत्परया भक्त्या स कैवल्यमवाप्नुयात्।। (महाभागवत पु. 67/138)

इसके पाठ करनेवाले को किसी प्रकार का दुःख नहीं होता तथा उसे शिवजी की कृपा से परम ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। यह सभी प्रकार के मंगलों को बढ़ानेवाला है। दुर्भिक्ष, लोकपीड़ा तथा देश में होनेवाले उपद्रव की अवस्था में शिव की धूप – दीपादि से उपासना कर इस स्तोत्र का भक्तिपूर्वक पाठ करना चाहिये। इसके पाठ से यथासमय पर्याप्त वर्षा होती है, अच्छी फसल होती है, सभी प्रकार के पापों का नाश होता है तथा अकाल मृत्यु से बचाव होता है। (महाभागवत पु. 67/139 – 146)

वह देश धन्य है तथा वहाँ की प्रजा धन्य है जहाँ पार्थिवलिंग की पूजा के पश्चात् यह सहस्त्रनाम पढ़ा जाता है। फाल्गुन मास के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को भक्तिपूर्वक इसका पाठ अत्यन्त सुख देनेवाला होता है। तथा उसका पुनर्जन्म नहीं होता। गंगा के समीप या कुरुक्षेत्र या प्रयाग में महेश्वर की पूजा के बाद इसका पाठ कैवल्य प्रदान करता है। काशी में इसके पाठ का फल अवर्णनीय है। इसका बिल्व के मूल में स्थित हो पाठ करने से शिवसालोक्य की प्राप्ति होती है। इसका पाठ ग्रह आदि की बाधाओं से भी मुक्त करता है। (महाभागवत पु. 67/147 – 148, 151 – 156)

इस पुराण में शैवों के प्रमुख तीर्थ काशी या वाराणसी की महिमा का भी गुण – गान हुआ है। मर्त्यलोक में स्थित वाराणसी नगरी जहाँ भगवान् शिव का दिव्य आलय है उसे मुक्तिक्षेत्र कहा जाता है। वहाँ पर मनुष्य की क्या बात अपितु ब्रह्मादि देवता भी जाकर मृत्यु की इच्छा रखते हैं। क्योंकि वहाँ मरनेवाले को मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

मर्त्येऽपि रम्या नगरी पुरी वाराणसी परा।
मुक्तिक्षेत्रात्मिका चैव देवा ब्रह्मपुरोगमाः।।

अपि मृत्युं समिच्छन्ति किं पुनर्मानवादयः।
एवं दिव्यालयस्तस्य महेशस्य परात्मनः।। (महाभागवत पु. 5/15-16)

भगवान् शिव वाराणसीपुरी में मरनेवाले प्रत्येक प्राणी, शशक हो या मशक, मानव हो या देव, सभी के कान में तारक ब्रह्म का उपदेश करते हैं। फलस्वरूप प्राणी मुक्त हो जाता है।(महाभागवत पु. 2/15, 21)

(4) शिवपूजा संबंधी कुछ अन्य बातें

जो कोई भगवान् शिव(के लिंग) को पाद्य समर्पित करता है वह पापों से मुक्त हो स्वर्गलोक को प्राप्त करता है।

पाद्यं यस्तु महेशाय ददाति मनुजोत्तमः।
सोऽपि पापविनिर्मुक्तः स्वर्गलोकमवाप्नुयात्।। (महाभागवत पु. 81/18)

शिवनिर्माल्य के भक्षण के सन्दर्भ में कहा गया है कि शिवलिंग के ऊपर अर्घ्य आदि जो कुछ भी समर्पित किया जाता है वह प्रसाद अग्राह्य है, उसे खाना नहीं चाहिये। वह सब विष्णुजी के लिये ही ग्राह्य है अन्यों के लिये नहीं। अगर अन्य कोई उसे ग्रहण करता है तो वह विष्णु के कोप का भाजन होता है। लिंग के ऊपर का पदार्थ अगर शालिग्राम शिला से स्पर्श करा दिया जाय तो वह ग्राह्य हो जाता है(क्योंकि तब वह भगवान् विष्णु का प्रसाद बन जाता है)। पुनः अनादिलिंग(स्वयंभूलिंग) का निर्माल्य ग्राह्य है, उसे ग्रहण करने से शिवत्व की प्राप्ति हो जाती है। मनुष्य उस प्रसाद को खाकर स्वयं शंकर के तुल्य हो जाता है।

अर्घ्यादिकं तु यत्किञ्चिद्दीयते शम्भवे मुने।
सर्वं तत्सम्प्रदद्याच्च लिङ्गोपरि कियत्कियत्।।
अग्राह्यं तन्महाबुद्धे प्रसादं नापि भक्षयेत्।
विष्णोर्ग्राह्यं च नान्यस्य ग्रहणाद्विष्णुकोपभाक्।।
शालिग्रामशिलास्पर्शात् सर्वं तद्ग्राह्यमेव च।
अनादिलिङ्गनिर्माल्यं भुक्त्वा शङ्करतां व्रजेत्।
प्रसादं भक्षयेन्मर्त्यः स्वयं शङ्करतां व्रजेत्।। (महाभागवत पु. 81/19-21)

भगवान् शिव एवं विष्णु

सभी शास्त्रों एवं पुराणों की भाँति इस पुराण में भी भगवान् शिव एवं विष्णु की तात्त्विक एकता का प्रतिपादन किया गया है। दक्ष ने अपने यज्ञ में भगवान् शिव की गरिमा को न जान पाने के कारण उन्हें निमन्त्रित नहीं किया था। उसकी दृष्टि में भगवान् विष्णु ही सर्वेश्वर एवं यज्ञ के फलदाता हैं। उसकी दृष्टि में 11 रुद्रों में से ही एक रुद्र शिव हैं जो ब्रह्माजी के पुत्र हैं। अतः वे विष्णुजी की भाँति पूजनीय नहीं हैं। दक्ष यह नहीं समझ पाता कि 'रुद्ररूप शिव' 'सदाशिव' के ही पूर्णावतार हैं और सदाशिव परब्रह्म हैं जिनसे ही ब्रह्मा, विष्णु आदि की उत्पत्ति हुई है। भगवान् विष्णु शिव की प्रकृति(या

माया) के ही साकाररूप हैं। फलस्वरूप शिव एवं विष्णु में तात्त्विक अभिन्नता है।

दक्ष की इस अज्ञानता को ही दूर करने के लिये दधीचिजी उससे कहते हैं कि जो विष्णु हैं वही महादेव हैं और स्वयं शिव ही नारायण हैं। इन दोनों में कहीं भी और कभी भी भेद नहीं है। उनमें से किसी एक से द्वेष करने पर दूसरा कभी भी प्रसन्न नहीं होगा।

यो विष्णुः स महादेवः शिवो नारायणः स्वयम्।।
नानयोर्विद्यते भेदः कदाचिदपि कुत्रचित्।
.....।।
एकं द्विषन्तमपरो न प्रसन्नः कदाचन्। (महाभागवत पु. 7/63-65)

दक्ष के यज्ञ का विनाश करने हेतु वीरभद्रादि प्रमथगणों के पहुँच जाने पर भगवान् विष्णु मन में सोचते हैं कि मूढ़मति दक्ष यज्ञ में शिव से द्वेष करता है। अतः शिव से विद्वेष रखने के कारण वह मेरा भी विद्वेषी है क्योंकि मैं ही शिव हूँ अथवा शिव ही विष्णु हैं, हम दोनों में भेद नहीं है। वह हमारे विष्णुरूप की तो विशेष प्रार्थना करता है पर महादेवरूप की निन्दा करता है। अतः उसके द्विविध विचार एवं कर्म के अनुसार ही मैं भी कर्म करूँगा। मैं विष्णुरूप से उसकी रक्षा तथा शिवरूप में संहार करूँगा। मैं(प्रमथगणों से) प्रेमपूर्वक युद्ध कर पराजित हो जाऊँगा, तदनन्तर रुद्ररूप से मैं उसका शमन करूँगा। और अन्त में सभी देवताओं सहित उसके यज्ञ को सम्पूर्ण करूँगा।

दक्षो मूढमतिः शम्भुं विद्विषन्कुरुते मखम्।
.....।।
शिवविद्वेषणेनैव विद्विष्टोऽस्मि न संशयः।
अहं शिवः शिवो विष्णुर्भेदो नास्त्यावयोर्यतः।।
अनेन विष्णुरूपेण प्रार्थितोऽस्मि विशेषतः।
निन्दितोऽस्मि महादेवस्वरूपेणाहमेव हि।।
अस्यापि भावद्वैविध्यं कर्मणा मनसापि च।
विधत्ते द्विविधं भावं करिष्याम्यहमेव तत्।।
रक्षिता विष्णुरूपेण संहर्ता शिवरूपतः।
कृत्वा स्नेहात्स्वयं युद्धं लब्ध्वा तत्र पराजयम्।।
रुद्ररूपेण तं दक्षं शमयिष्याम्यसंशयम्।
पश्चात्तु यज्ञं सम्पूर्णं करिष्यामि सुरैः सह।। (महाभागवत पु. 10/41-46)

जब वीरभद्र एवं विष्णुजी में घोर संग्राम चल रहा था तो इसी बीच में आकाशवाणी द्वारा वीरभद्र को बताया जाता है कि जो विष्णु हैं वही महादेव हैं और जो शिव हैं वही स्वयं नारायण हैं। इन दोनों में कहीं भी और कभी भी भेद नहीं है। इस आकाशवाणी को सुनकर वीरभद्र ने विष्णुजी को नमस्कार

कर उनसे युद्ध से विरत हो दक्ष को पकड़कर उसका शिर काट डाला। (महाभागवत पु. 10/63-67)

यो विष्णुः स महादेवः शिवो नारायणः स्वयं।

.....।। (महाभागवत पु. 10/64)

भगवान् शिव की स्तुति में उन्हें हरि (महाभागवत पु. 67/33), नारायण (वही 67/81) तथा श्रीपति (वही 67/98) आदि कहा गया है। इन विशेषणों या संज्ञाओं से भी यही स्पष्ट होता है कि शिवजी एवं विष्णुजी में अभिन्नता है, क्योंकि दोनों की समान संज्ञाएँ तथा विशेषण हैं।

भगवान् शिव का राधा के रूप में अवतार

भगवान् की लीलाएँ मनुष्य, देवता, दानव अथवा ऋषि-मुनि सभी के लिये अगम्य होती हैं। भगवान् शिव की एक ऐसी ही अद्भुत लीला का वर्णन किया जा रहा है जिसमें उन्होंने किसी कल्प में राधा के रूप में अवतार लिया था।

एक बार भगवान् शिव ने देवी से यह निवेदन किया कि धरती पर वह पुरुषरूप में अवतार लें तथा वे स्वयं स्त्रीरूप में अवतार लेंगे। देवी ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। तदनन्तर पृथ्वी ने ब्रह्माजी को यह निवेदन किया कि वे दुर्योधन एवं कंसादि दुष्टों के भार से उसे मुक्ति दिलायें। फलस्वरूप ब्रह्माजी कैलास पर जाकर देवी से दुर्योधन एवं कंसादि राक्षसों (जो पिछले जन्म में विष्णु द्वारा मारे गये थे) के भार से पृथ्वी को मुक्त करने के लिये प्रार्थना की। तब देवी ने उन्हें कहा कि मैं पुरुषरूप से वसुदेव के घर अवतार लेकर आपका कार्य करूँगी। इस प्रकार भगवान् शिव की इच्छा तथा ब्रह्माजी के निवेदन के कारण देवी ने कृष्ण के रूप में वसुदेव-देवकी के यहाँ अवतार लिया।

भगवान् शिव ने स्त्री के रूप में वृषभानु के घर राधारूप से अवतार लिया। उनकी अष्ट मूर्तियों ने भी धरती पर रूक्मिणी तथा सत्यभामा आदि के रूप में जन्म लेकर कृष्ण की पटरानियाँ बनीं। इसी प्रकार देवी की सखियाँ जया एवं विजया भी पुरुषरूप में श्रीदाम एवं वसुदाम के रूप में अवतरित हुईं। भगवान् विष्णु एक अंश से श्रीकृष्ण के अग्रज बने तथा दूसरे अंश से अर्जुन। ब्रह्माजी की प्रार्थना के अनुसार कृष्णरूपधारी देवी ने कंस एवं दुर्योधनादि दुष्ट राक्षसों से पृथ्वी को मुक्त किया। भगवान् शिव के राधारूप में अवतरित होने की कथा का वर्णन इस पुराण (के अध्याय 49 से 54) में किया गया है। 58 वें अध्याय के अन्त में कहा गया है कि पुरुषरूप में लीलापूर्वक जगन्माता धरती के भार को उतारने के बाद अपने स्वरूप में स्थित हो अपने धाम को लौट गयीं। किसी अन्य कल्प में द्वापर के अन्त में विष्णुजी अपने पूर्ण अंश से श्रीकृष्ण रूप में अवतरित होंगे।

पुंरूपेण जगन्माता लीलया धरणीतले।
हृत्वा च पृथ्वीभाराञ्चलेनैव महामते।।
भूयः स्वरूपमाश्रित्य स्वस्थानं समुपागमत्।
कल्पान्तरे तु भूपृष्ठे द्वापरान्ते महामुने।।

विष्णुः श्रीकृष्णरूपेण पूर्णांशेन जगत्प्रभुः।
शम्भोर्वरप्रदानेन सम्भविष्यति लीलया।
निहनिष्यति भूभारमेवमेव महामते।। (महाभागवत पु. 58/50-52)

उपसंहार

यह उपपुराण देवी की महिमा को बतानेवाला एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसी कारण से बृहद्धर्म पुराण ने इसकी गणना अठारह महापुराणों के अन्तर्गत की है। इस पुराण के अन्तर्गत भी नाना प्रसंगों में भगवान् शिव को ही परम ब्रह्म या तत्त्व स्वीकार किया गया है। इसमें भगवान् शिव के निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों की चर्चा है। निर्गुणरूप में उन्हें अद्वैतब्रह्म, अचिन्त्य, नित्यानन्दमय, पूर्ण, ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी के द्वारा अगम्य, परात्पर, अच्युत, शुद्धात्मा, केवल ज्ञानस्वरूप, शुद्धबोध तथा केवल आत्मस्वरूप आदि कहा गया है। सगुणरूप धारणकर शिव अनेक विशेषताओं से युक्त हो जाते हैं।

सगुणरूप में वे परमेश्वर, ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्ररूप धारणकर क्रमशः जगत् की सृष्टि, पालन तथा संहार करनेवाले, सर्वेश्वर, भगवान्, परमपुरुष, सुरश्रेष्ठ, ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी देव, दानव एवं मानव द्वारा अर्चित, यज्ञेश्वर, पशुपति, अनघ, शुद्ध, पंचमुखी, चन्द्रमा, गज एवं व्याघ्रचर्म आदि को धारण करनेवाले, नागों का आभूषण पहननेवाले, नीलकण्ठ, शक्ति को अर्द्धांग में धारण करनेवाले, शिर पर जटा-जूट एवं गंगा को धारण करनेवाले, जगत्पति, भयत्राता, परोपकारी, परित्राता, भोग एवं मोक्ष को प्रदान करनेवाले, सभी प्रकार के रोगों को हरनेवाले, मंगलकारी, असाध्यसाधक, लोकसम्पूज्य, दयावान, कामनाओं का नाश करनेवाले, मृत्युञ्जय, नानारूपधारी, विश्वयोनि, सर्वज्ञ तथा समदर्शी आदि विशेषताओं से युक्त हैं।

भगवान् शिव भोग-मोक्षदाता, आशुतोष, असाध्य-साधक तथा सभी प्रकार के मनोवांछित फल प्रदान करनेवाले हैं। भगवान् शिव की ये विशेषताएँ उनकी भक्ति के प्रमुख आकर्षण हैं। भगवान् शिव ही यज्ञादि सभी शुभ(वा अशुभ) कर्मों के फलदाता हैं इसीलिये उनकी पूजा के बिना किसी भी प्रकार की पूजा या शुभकर्म निरर्थक होते हैं। पहले शिव की पूजा करके ही दूसरे इष्ट की पूजा करनी चाहिये। पुनः घोर कलियुग में शिव-पूजा के अलावा मुक्ति का कोई अन्य उत्तम उपाय नहीं है। जो लोग भक्तिपूर्वक अथवा अभक्तिपूर्वक किसी भी प्रकार से शिव की उपासना करते हैं वे लोग यमयातना से बच जाते हैं।

शिव की उपासना मूलतः लिंग की उपासना है। लिंगोपासना या तो स्थापित लिंग की या पार्थिवलिंग की होती है। पार्थिवलिंग की बिल्वपत्रों से की गयी पूजा को श्रेष्ठ बताया गया है। जो लोग बिना शिव-पूजा के ही अन्य देवों की पूजा करते अथवा कोई शुभ कर्म करते, उनकी पूजा अथवा कर्म निष्फल होता है तथा वे पाप के भागी होते हैं।

भगवान् शिव के नाम की महिमा को बताते हुए कहा गया है कि इसके जप से भगवान् शिव

प्रसन्न हो अपने गणों के साथ उसकी रक्षा में तत्पर रहते हैं। जहाँ शिव का नाम लिया जाता है वहाँ सभी तीर्थ उपस्थित हो जाते हैं। उनके नाम का स्मरण करते हुए मरनेवाले को शिवसायुज्यता प्राप्त होती है। उनके नाम के जप से सभी प्रकार के पापों से मुक्ति हो जाती है। उनका नाम चाहे भाव से जपें चाहे कुभाव से, उसका अवश्य ही फल प्राप्त होता है।

रुद्राक्ष की महिमा बताते हुए कहा गया है कि इसके धारण से सभी प्रकार के पापों का नाश हो जाता है। बिना रुद्राक्ष धारण किये हुए अगर कोई देव या पितृकर्म किया जाय तो उसका कोई फल नहीं होता। किसी भी तीर्थ में बिना रुद्राक्षधारण के कोई भी शुभकर्म नहीं करना चाहिये। रुद्राक्षधारी मरने के बाद स्वर्ग को प्राप्त करता है। रुद्राक्षमाला से शिव एवं दुर्गा के मन्त्रों का जप करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है।

इस पुराण में शिवसंबंधी दो प्रमुख स्तोत्र हैं जिनके पाठ से व्यक्ति को भोग एवं मोक्ष दोनों ही प्राप्त होते हैं। पहला नन्दीकृत है जिसका उल्लेख छठें अध्याय (श्लोक 18 – 20) में है, तथा दूसरा भगीरथ कृत सहस्त्रनाम स्तोत्र है जिसका उल्लेख अध्याय 67 (श्लोक 1– 125) में हुआ है। यह स्तोत्र लिंग पुराण, महाभारत, सूर्य पुराण, शिव पुराण, वायु पुराण, ब्रह्म पुराण तथा वामन पुराण में वर्णित सहस्त्रनाम स्तोत्रों से काफी भिन्न है। इस स्तोत्र का अमित फल बताया गया है। काशी तीर्थ की महिमा के सन्दर्भ में बताया गया है कि यहाँ मरनेवाले प्राणी के कान में भगवान् शिव स्वयं तारकब्रह्म का उपदेश करते हैं जिसके प्रभाव से वह मुक्त हो जाता है।

शिवनिर्माल्य के भक्षण के बारे में कहा गया है कि लिंग के ऊपर चढ़ाये द्रव्य का उपभोग नहीं करना चाहिये। ऊपर चढ़ाया गया द्रव्य विष्णुजी के भोग के लिये होता है। उसका भोग करनेवाला विष्णुजी के कोप का भाजन होता है। लिंग पर चढ़े द्रव्य को शालिग्राम शिला से स्पर्श कर उपभोग किया जा सकता है। परन्तु स्वयंभू अथवा अनादिलिंग के निर्माल्य को ग्रहण करना चाहिये। अनादिलिंगों के प्रसाद को ग्रहण करने से मनुष्य भगवान् शिव के तुल्य हो जाता है।

इस पुराण में भगवान् शिव एवं विष्णु की एकता को विस्तारपूर्वक बताया गया है। दोनों ही देवता तत्त्वतः एक हैं। शिव ही विष्णु हैं अथवा विष्णु ही शिव हैं। एक की निंदा दूसरे की निन्दा है। अतः इनमें से किसी की भी निन्दा करनेवाला पातकी एवं नरकगामी होता है।

अन्त में भगवान् शिव ने किसी कल्प में एकबार लीलापूर्वक स्त्रीरूप में धरती पर अवतार लिया था तथा देवी ने पुरुष रूप में। ब्रह्माजी की धरती के भार को उतारने की प्रार्थना तथा शिव की इच्छा से देवी ने धरती पर वासुदेव – देवकी के यहाँ श्रीकृष्णरूप में तथा भगवान् शिव स्वयं वृषभानु के यहाँ राधा के रूप में अवतरित हुए। शिव की अष्टमूर्तियाँ रूक्मिणी तथा सत्यभामादि कृष्ण की आठ पटरानियों के रूप में अवतरित हुईं तथा देवी की सखियाँ जया एवं विजया श्रीदाम एवं वसुदाम के रूप

में। किसी अन्य कल्प में भगवान् विष्णु अपने पूर्णांश के साथ कृष्ण के रूप में धरती पर अवतरित होंगे।

(यह लेख ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली द्वारा 1983 में प्रकाशित तथा डॉ0 पुष्पेन्द्र कुमार द्वारा संपादित 'श्रीमहाभगवतपुराणम्' की प्रति पर आधारित है।)

S S S S S S S S

श्रोत्रिय ब्राह्मण के लक्षण

नारदजी द्वारा यह पूछे जाने पर कि कौन सा ब्राह्मण पूज्य है ब्रह्माजी कहते हैं कि उत्तम श्रोत्रियकुल में उत्पन्न होकर भी जो वैदिक कर्मोंका अनुष्ठान नहीं करता, वह पूजित नहीं होता। ब्रह्माजी नारदजी से आगे कहते है कि "विश्वामित्र यद्यपि क्षत्रियकुल में उत्पन्न हैं, तथापि अपने सत्कर्मों के कारण वे मेरे समान हैं।" पृथ्वी के तीर्थस्वरूप श्रोत्रिय ब्राह्मणों के लक्षण बताते हुए ब्रह्माजी कहते हैं कि ब्राह्मण के बालक को जन्म से ब्राह्मण समझना चाहिये। संस्कारों से उसकी 'द्विज' संज्ञा होती है तथा विद्या पढ़ने से वह 'विप्र' नाम धारण करता है। इस प्रकार जन्म, संस्कार और विद्या – इन तीनों से युक्त होना श्रोत्रिय ब्राह्मण का लक्षण है। ऐसा ही ब्राह्मण अत्यन्त पूजनीय है।

जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते।।
विद्ययायातिविप्रत्वंत्रिभिः श्रोत्रियलक्षणम्।

(पद्म महापु. सृष्टिखण्ड 46/129-30)

आगे अधम ब्राह्मणों का लक्षण बताते हुए ब्रह्माजी कहते हैं कि मन्त्र और संस्कार से हीन, शौच(पवित्रता) और संयम से रहित, बलिवैश्व किये बिना ही भोजन करनेवाले, दुरात्मा, चोर, मूर्ख, सब प्रकार के धर्मों से शून्य, कुमार्गगामी, श्राद्ध आदि कर्म न करनेवाले, गुरु-सेवा से दूर रहनेवाले, मन्त्रज्ञान से वंचित तथा धार्मिक मर्यादा भंग करनेवाले – ये सभी के सभी ब्राह्मण अधम से भी अधम हैं। उन दुष्टों से बात भी नहीं करनी चाहिये। वे सब-के-सब नरकगामी होते हैं। उनका आचरण दूषित होता है; अतएव वे अपवित्र और अपूज्य होते हैं।

मंत्रसंस्कारहीनाश्च शुचिसंयमवर्जिताः।
मोघाशिनोदुरात्मानो ब्राह्मणाश्चाधमाधमाः।।
अपिस्तेयरतामूढाः सर्वधर्मविवर्जिताः।
उन्मार्गगामिनोनित्यं ब्राह्मणाश्चाधमाधमाः।।
श्राद्धादिकर्मरहिता गुरुसेवाविवर्जिताः।
अमन्त्राभिन्नमर्यादाएतेसर्वाधमाधमाः।।
असंभाष्याइमेदुष्टास्सर्वेनिरयगामिनः।
अमेध्यास्तेदुराचाराअपूज्याश्चसमंततः।। (पद्म महापु. सृष्टिखण्ड 47/13-16)